Research Reinforcement | A Peer Reviewed International Refereed Journal | ISSN 2348-3857
Vol. 11, Issue 2 | November 2023 - April 2024 | pp. 111-118

जलवायु परिवर्तन से उपजे संकटों के निवारण में कॉप (सी.ओ.पी.) की भूमिका

माया शर्मा

स्नातकोत्तर छात्रा, भूगोल विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कालाडेरा, जयपुर (राजस्थान)

शोध सारांश

प्रकृति द्वारा प्रदत्त स्वच्छ वायुमण्डल को आज का विकसित मानव किस हद तक प्रदूषित कर रहा है, यह चिन्ता का विषय है। इससे जलवायु इतनी परिवर्तित हो गई है कि मनुष्य का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। प्रकृति को जीतने के प्रयास में मनुष्य ने अपने जीवन की आधारभूत नींव को पर्याप्त हद तक बिगाड़ दिया है। आर्थिक विकास की इस अंधी दौड़ में विकास के लिए वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के विस्तार तथा विश्व में औद्योगिक उत्पादन में अत्यधिक बढ़ोतरी के परिणामस्वरूप समाज एवं प्रकृति तथा उसके रहने के परिवेश की अन्योन्याश्रय क्रिया बढ़कर चरम सीमा तक पहुँच गई है। प्रस्तुत शोध पत्र के लेखन का उद्देश्य जलवायु परिवर्तन की व्याख्या करते हुए जलवायु परिवर्तन के कारणों को पहचानना है। शोध पत्र में पर्यावरण संरक्षण हेतु आयोजित प्रमुख विश्व सम्मेलनों की भी विस्तार से चर्चा की गई है। जलवायु परिवर्तन से जनित समस्याओं का विश्लेषण भी इस शोध पत्र में किया गया है। पृथ्वी को जलवायु परिवर्तन के संकट से बचाने हेतु की जा रही अन्तर्राष्ट्रीय मुहिम की विवेचना भी शोध पत्र में की गई है। जलवायु परिवर्तन से उपजे खतरों को रोकने में कॉप (सी.ओ.पी.) की भूमिका का वर्णन भी शोध पत्र में किया गया है।

संकेताक्षर—*कॉप, ग्लोबल वार्मिंग, आईपीसीसी, ग्रीन क्लाइमेट फंड, नेट जीरो, लॉस एण्ड डैमेज फंड*

प्रस्तावना

जलवायु परिवर्तन एक प्रमुख वैश्विक पर्यावरणीय एवं विकासात्मक समस्या है। जलवायु परिवर्तन का अर्थ है—जलवायु की स्थिति में परिवर्तन होना, इस तरह के परिवर्तन में काफी लम्बा समय लगता है। कभी-कभी तो यह अवधि दशकों में होती है, अथवा इससे भी लम्बी अवधि हो सकती है। जलवायु परिवर्तन बाहरी दबावों अथवा प्राकृतिक आंतरिक प्रक्रिया के कारण होती है। यू.एन.एफ.सी.सी.सी. (यू.एन. फ्रेमवर्क कनवेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज) ने जलवायु परिवर्तन के बारे में बताया है कि जलवायु परिवर्तन सीधे तौर पर या परोक्ष रूप से मानव गतिविधियों के कारण होता है जो भूमण्डलीय वायुमण्डल की संरचना को बदलती है और कुछ समय की अवधि के बाद प्राकृतिक जलवायु में भिन्नता लाती है। ऐसा तुलनात्मक काल अवधि में देखा जाता है। संयुक्त राष्ट्र की टिप्पणी है कि 'जलवायु परिवर्तन' एक ऐसा मुद्दा है जो हमारे समय को परिभाषित कर रहा है और हम एक निर्णायक क्षण पर खड़े हैं। "आर्थिक विकास में उत्तरोत्तर तेजी लाने और अपने लिए सभी प्रकार की भौतिक सुख सुविधाएँ जुटाने की अंधी दौड़ में मानव ने पर्यावरणीय कारकों को इतनी अधिक क्षति पहुँचाई है कि विगत शताब्दी में वैश्विक तापमान में 2-3 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हो चुकी है। इसकी तपिश अब पृथ्वी पर रहने वाले सभी जीव जन्तु, जलचर, नभचर और थलचर झेल रहे हैं। "कुछ दशकों पूर्व जलवायु परिवर्तन की संकल्पना का मात्र शैक्षिक महत्त्व समझा जाता था। किन्तु विगत् कुछ दशकों पूर्व वैज्ञानिकों ने जलवायु में होने वाले अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक परिवर्तनों को महत्त्व देना प्रारम्भ

कर दिया है और इस सम्बन्ध में अनेक महत्त्वपूर्ण शोध कार्य एवं अनुसंधान होने लगे हैं।"[1]

जलवायु परिवर्तन के कारण

जलवायु परिवर्तन के कारणों का बेहतर तरीके से विश्लेषण करने के लिए इन्हें दो भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(अ) प्राकृतिक कारण

(ब) मानवजनित कारण

(अ) प्राकृतिक कारण

(i) महाद्वीपीय संवहन—सृष्टि के प्रारम्भ में सभी महाद्वीप एक ही बड़े धरातल के रूप में पृथ्वी पर मौजूद थे, परन्तु सागरों के कारण धीरे-धीरे वे महाद्वीप एक दूसरे से दूर होते चले गए। महाद्वीपीय संवहन अर्थात महाद्वीपों का खिसकना वर्तमान में भी जारी है, जिसके परिणामस्वरूप समुद्री धाराएँ एवं हवाएँ प्रभावित होती है एवं इनका सीधा प्रभाव पृथ्वी की जलवायु पर पड़ता है।

(ii) खगोलीय कारण—इसमें मुख्य रूप से सौर कलंक आते हैं। इससे सौर ऊर्जा में परिवर्तन होता है। सूर्य के धब्बे चक्रीय क्रम में घटते-बढ़ते रहते हैं। सौर कलंक में वृद्धि से मौसम ठण्डा एवं आर्द्र हो जाता है और तूफानों की संख्या बढ़ जाती है। इसके विपरीत जब सौर कलंक की संख्या घटती है तो मौसम उष्ण एवं शुष्क हो जाता है।

(iii) ज्वालामुखी विस्फोट—जब ज्वालामुखी विस्फोट होता है तो बड़ी मात्रा में एरोसॉल वायुमण्डल में प्रवेश करता है। यह एरोसॉल बहुत लम्बे समय तक वायुमण्डल में सक्रिय रहता है तथा यह एरोसॉल सौर विकिरण को कम कर देता है, जिससे पृथ्वी का तापमान कम हो जाता है। एक अनुमान के अनुसार प्रतिवर्ष लगभग सौ लाख टन कार्बन डाइऑक्साइड गैस ज्वालामुखी विस्फोटों द्वारा वायुमण्डल में फैल जाती है। वर्ष 1816 में अमेरिका, इंग्लैंड तथा पश्चिमी यूरोपीय देशों में ग्रीष्म ऋतु में अचानक भयंकर ठण्ड आई थी, जिसे 'किलिंग समर फ्रॉस्ट' नाम दिया गया था, उसका कारण वर्ष 1815 में इण्डोनेशिया में हुए अनेक ज्वालामुखी विस्फोटों को माना जाता है।

(iv) पृथ्वी का झुकाव—पृथ्वी के झुकाव के कारण जलवायु में परिवर्तन होता है। पृथ्वी के अधिक झुकाव से अधिक गर्मी एवं अधिक सर्दी होती है तथा कम झुकाव से कम गर्मी तथा कम सर्दी का मौसम होता है।

(v) समुद्री धाराएँ—पृथ्वी का लगभग दो तिहाई (71 प्रतिशत) हिस्सा समुद्रों से ढका हुआ है जो कि वातावरण तथा जमीन की तुलना में दोगुना सूर्य का प्रकाश अवशोषित करता है। समुद्रों में वायुमण्डल की तुलना में पचास गुणा कार्बन डाइऑक्साइड गैस अधिक होती है। समुद्री धाराओं में बदलाव आने से जलवायु भी प्रभावित होती है।

(ब) मानवजनित कारण

इसमें प्रमुख रूप से मानव द्वारा की गई अवांछित गतिविधियों से उत्पन्न परिणाम सम्मिलित है, जिन्हें मानव प्रयासों से ही कम किया जा सकता है। मानवजनित कारण निम्नानुसार है—

(i) ग्रीनहाउस गैसें—पृथ्वी के चारों ओर ग्रीनहाउस गैस की एक परत बनी हुई है। इस परत में मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड एवं कार्बन डाइऑक्साइड जैसी गैसें शामिल है। ग्रीनहाउस गैसों की यह परत पृथ्वी की सतह पर तापमान के संतुलन को बनाए रखने के लिए आवश्यक है। आधुनिक युग में जैसे-जैसे मानवीय गतिविधियाँ बढ़ रही है, वैसे-वैसे ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में भी वृद्धि हो रही है, जिसके कारण वैश्विक तापमान में वृद्धि हो रही है।

(ii) नगरीकरण—औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप रोजगार पाने के लिए गाँवों में स्थित आबादी शहरों की ओर प्रस्थान करनी लगी, जिसके परिणामस्वरूप शहरों का आकार दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगा। जैसे-जैसे शहरों का आकार बढ़ रहा है, वहाँ पर उपलब्ध जमीन दिनोंदिन ऊँची-ऊँची इमारतों से ढँकती जा रही है, जिससे उस स्थान की जल संवर्धन क्षमता कम हो रही है। शहरीकरण के कारण जंगलों का सफाया हो रहा है, जिससे उस क्षेत्र के पर्यावरण एवं जलवायु पर निरन्तर प्रभाव पड़ रहा है।

(iii) औद्योगीकरण—जलवायु परिवर्तन में मुख्य भूमिका औद्योगिक क्रान्ति की ही है। कल-कारखानों से निकलने वाली सल्फर डाइऑक्साइड, कॉर्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन डाइऑक्साइड एवं अन्य अनेक प्रकार की जहरीली गैसें वायुमण्डल में काफी वर्षों तक विद्यमान रहती है। औद्योगीकरण ने ओजोन परत का क्षरण, ग्रीनहाउस प्रभाव एवं ग्लोबल वार्मिंग जैसी समस्याओं को जन्म दिया है।

(iv) वनों की कटाई—विकासशील देशों में ईंधन एवं अन्य जरूरतों की आपूर्ति हेतु तथा विकसित राष्ट्रों में शहरीकरण एवं औद्योगीकरण हेतु निरन्तर वनों का सफाया किया जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप पृथ्वी का हरित क्षेत्र अत्यधिक तेजी के साथ घट रहा है।

(v) रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग—खाद्य सामग्री के उत्पादन में बढ़ोतरी हेतु रासायनिक कीटनाशकों एवं उर्वरकों का बेतहाशा प्रयोग किया जा रहा है, जिसके परिणामस्वरूप भूमि एवं जल में इन जहरीले कीटनाशकों की मात्रा भी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इन कीटनाशकों ने पर्यावरण को प्रदूषित कर घातक स्थिति में पहुँचा दिया है।

जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव

जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप पर्यावरण में खतरनाक परिघटनाएँ परिलक्षित हो रही है जो पृथ्वी की शक्ल-सूरत को बदल सकती है और पशु-पक्षी जगत की अनेक जातियों एवं खुद मानव के अस्तित्व को भी संकट में डाल सकती है। पृथ्वी नक्षत्रमण्डल पर जलवायु परिवर्तन के पड़ने वाले दुष्प्रभाव निम्नानुसार है—

(i) वैश्विक तापमान में वृद्धि (ग्लोबल वार्मिंग) हो रही है। "संयुक्त राष्ट्र के इंटर गवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (आईपीसीसी) की छठी रिपोर्ट के मुताबिक पिछली डेढ़ सदी में दुनिया पहले ही लगभग 1.1 डिग्री सेल्सियस गर्म हो चुकी है और 2030 के दशक में 1.5 डिग्री सेल्सियस तापमान के आंकड़े को पार कर लेगी।"[2] ऐसा पहले के अनुमान से करीब 10 वर्ष पहले होगा। स्पष्ट है कि हाल के वर्षों में तापमान में तेजी से बढ़ोतरी हुई है।

(ii) जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप ओजोन परत का अवक्षय होगा। बढ़ता तापमान और ओजोन परत में छेद पृथ्वी के लिए दो अलग-अलग खतरे हैं, फिर भी आपस में जुड़े हुए हैं। "गरम होती धरती और ग्रीनहाउस प्रभाव का सम्बन्ध वातावरण की निचली सतह में गर्मी सोखने वाली गैसों की बढ़ती सघनता से है। इसके उलट ओजोन परत का सम्बन्ध वातावरण की ऊपरी सतह से है। यह परत सूर्य से आने वाली उन पराबैंगनी विकिरणों को रोकती है जो वनस्पति, पशुओं और मानवों के लिए नुकसानदेह हैं।"[3]

(iii) जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप जैव विविधता एवं पारिस्थितिकी तंत्र को गंभीर नुकसान पहुँचा है। जैव विविधता अर्थात वनस्पति एवं पशु प्रजातियों की विविधता मानव के अस्तित्व के लिए अत्यावश्यक है। वनों की कटाई के कारण जलवायु परिवर्तन तेजी से हो रहा है। पेड़ एवं जंगल समाप्त हो रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप जीव जन्तु विलुप्त हो रहे हैं एवं उनके आवास क्षेत्र समाप्त होते जा रहे हैं। "ग्रीनहाउस गैसों के निरन्तर उत्सर्जन तथा विश्व तापन (ग्लोबल वॉर्मिंग) के कारण 2050 तक पादप एवं जन्तुओं की 10 लाख जातियों के लुप्त होने की आशंका व्यक्त की गई है। पृथ्वी के तापमान में वृद्धि का सर्वाधिक खतरा द्वीपीय जन्तुओं एवं वनस्पति पर है। द्वीपों पर क्षेत्रविशेषी प्राणी व पादप अधिक होने के कारण जलमग्न होने पर जैव विविधता की अत्यधिक हानि होगी।"[4]

(iv) "हाल के हिमचादरों एवं हिमनदों के निवर्तन के साक्ष्यों के आधार पर यह पता चलता है कि ग्रीनलैण्ड एवं अण्टार्कटिका की हिमचादरें टूट रही है। पर्वतीय हिमनदियों (ग्लेशियर) के पिघलने से सागर तल में वृद्धि हो रही है"[5], जिससे समुद्रों के आस-पास के तटवर्ती द्वीपों के डूबने का खतरा उत्पन्न हो गया है। आईपीसीसी की रिपोर्ट के अनुसार आने वाले वर्षों में समुद्र के करीब बसे शहर, सागर में विलीन हो सकते हैं। मालद्वीप जैसे छोटे द्वीपीय देशों में रहने वाले लोगों ने पहले से ही वैकल्पिक स्थलों की तलाश शुरू कर दी है।

(v) जलवायु परिवर्तन के कारण भूमि की उर्वरता समाप्त होती जा रही है, जिसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में गिरावट आ रही है। कृषि उत्पादन में गिरावट प्रत्यक्ष रूप से किसान की आय व उद्योगों की आपूर्ति पर प्रभाव डालती है जो रोजगार में कमी का कारण बनता है और इस तरह समूची अर्थव्यवस्था को प्रभावित करता है।

(vi) विश्व में मरूस्थल के बढ़ते विस्तार के लिए भी जलवायु परिवर्तन ही जरूरी कारक है। यूएनईपी के अनुमानों के अनुसार धरती की एक चौथाई भूमि पर मरूस्थलीकरण का खतरा है। 25 करोड़ लोग इससे प्रत्यक्षतः प्रभावित है तथा 100 देशों में एक अरब से अधिक लोगों की आजीविका खतरे में है। सूखे से मरूस्थलीकरण को बढ़ावा मिल रहा है। यूएनईपी की एक रिपोर्ट के अनुसार प्रति वर्ष 60 लाख हैक्टेयर खेती योग्य भूमि मरूभूमि में परिवर्तित हो जाती है।

(vii) "आग लगने, तूफान तथा बाढ़ आने का खतरा एवं चक्रवात की आवृति बढ़ रही है। नदियाँ सूख रही है तथा जल स्तर बहुत नीचे जा रहा है।"[6]

ISSN 2348-3857

(viii) ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन के कारण मानव स्वास्थ्य को भी गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। त्वचा से सम्बन्धित बीमारियों एवं कैन्सर के मरीजों की संख्या में अत्यधिक बढ़ोतरी हुई है। एक जानकारी के मुताबिक भविष्य में जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप मलेरिया एवं डेंगू जैसी बीमारियाँ और बढेंगी तथा इन्हें नियंत्रित करना मुश्किल होगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन के आंकड़ों के अनुसार पिछले दशक से अब तक हीट वेव्स के कारण लगभग 1,50,000 से अधिक लोगों की मृत्यु हो चुकी है।

(ix) जलवायु परिवर्तन के कारण औसत ताप बढ़ने से ध्रुवों की बर्फ पिघलने लगेगी, क्योंकि ध्रुवों का तापमान 4.5 डिग्री सेल्सियस से 7 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ने की उम्मीद है। "इसलिए वैज्ञानिकों का अनुमान है कि कुछ सदियों बाद ध्रुवों पर बिल्कुल बर्फ नहीं रहेगी, जिसके भयानक परिणाम होंगे। 5 डिग्री सेल्सियस ताप बढ़ने पर आर्कटिक सागर की सारी बर्फ गर्मियों में पिघल जायेगी, साथ ही ग्रीनलैण्ड की बर्फ भी धीरे धीरे पिघल जायेगी। इसके अतिरिक्त अंटार्कटिका की बर्फ भी धीरे-धीरे पिघलकर समुद्र में आ जाएगी और अगले सौ वर्षों में पूरी बर्फ पिघल जायेगी।"[7]

जलवायु परिवर्तन के संकट से निपटने हेतु आयोजित सम्मेलन

भूमण्डलीय पर्यावरण की गुणवता के संरक्षण, पारिस्थितिकीय संतुलन, पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता एवं जैव विविधता को कायम रखने के लिए तथा जलवायु परिवर्तन से इस धरती को बचाने की पहल संयुक्त राष्ट्र संघ, विभिन्न राष्ट्रों, स्वयंसेवी, गैर सरकारी तथा सरकारी संगठनों द्वारा की गई हैं तथा कई महत्त्वपूर्ण संधियों एवं घोषणाओं पर हस्ताक्षर किए गए हैं। ये संधियाँ एवं समझौते निम्नानुसार है—

(i) प्रथम विश्व जलवायु सम्मेलन (1979) जिनेवा (स्विट्जरलैण्ड) में आयोजित हुआ।

(ii) संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) तथा विश्व मौसम विज्ञान संगठन (डब्ल्यू.एम.ओ.) द्वारा वर्ष 1988 में जलवायु परिवर्तन के अध्ययन एवं विवरण प्रस्तुत करने के जलवायु परिवर्तन अंतरशासकीय पैनल (आई.पी.सी.सी.-इंटरगवर्नरमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज) का गठन किया गया। इस पैनल का मुख्य कार्य पृथ्वी पर हरितगृह गैसों के प्रभाव पर समय-समय पर रिपोर्ट प्रस्तुत करना सुनिश्चित किया गया।

(iii) 29 अक्टूबर से 7 नवम्बर 1990 तक जिनेवा में हरितगृह गैसों की रोकथाम हेतु कारगर उपाय के लिए दूसरे विश्व जलवायु सम्मेलन का आयोजन किया गया।

(iv) रिओ-डी-जेनेरो (ब्राजील) में जून, 1992 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण व विकास सम्मेलन, जिसे पृथ्वी सम्मेलन या रिओ सम्मेलन के नाम से जाना जाता है, का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन में 154 देशों ने भाग लिया तथा जलवायु परिवर्तन कन्वेंशन पर हस्ताक्षर किये।

(v) पृथ्वी सम्मेलन के समय हस्ताक्षरित जलवायु परिवर्तन कन्वेंशन को वर्ष 1994 में कार्य रूप प्रदान किया, जिसमें वर्ष 2000 तक कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन को वर्ष 1990 के स्तर पर लाना निर्धारित किया गया।

(vi) 23-27 जून, 1997 को द्वितीय पृथ्वी सम्मेलन का आयोजन संयुक्त राज्य अमेरिका के न्यूयॉर्क शहर में किया गया। इस सम्मेलन का कोई ठोस परिणाम नहीं निकल पाया, क्योंकि किसी निश्चित मसौदे पर कोई समझौता नहीं हो पाया। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य रिओ-डी-जेनेरो में सम्पन्न प्रथम सम्मेलन में निर्धारित एजेण्डा 21 के क्रियान्वयन का मूल्यांकन करना था।

(vii) जोहान्सबर्ग (दक्षिण अफ्रीका) में 26 अगस्त से 6 सितम्बर, 2002 तक संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रायोजित पृथ्वी सम्मेलन हुआ। सम्मेलन का मुख्य विषय रहा- टिकाऊ विकास। यह शिखर सम्मेलन जो पृथ्वी से सम्बद्ध शिखर सम्मेलन के दस वर्ष पश्चात् हुआ, से अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को इस बात का मूल्यांकन करने का अवसर मिला कि, क्या कार्यसूची-21 में उल्लिखित लक्ष्यों को प्राप्त कर लिया गया है।

जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल

जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल (आईपीसीसी) की स्थापना 1988 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (यूएनईपी) और विश्व मौसम विज्ञान संगठन (डब्ल्यूएमओ) द्वारा की गई थी। इस प्रकार आईपीसीसी संयुक्त राष्ट्र की इकाई है जो जलवायु परिवर्तन के प्रभाव और भविष्य में आने वाले खतरों का आकलन करती है, साथ ही इससे होने वाले नुकसान को कम करने और दुनिया के तापमान को स्थिर रखने के विकल्पों को भी सुझाती है।

आईपीसीसी प्रत्येक 6 या 7 वर्षों में अपनी आकलन रिपोर्ट तैयार करती है जो पृथ्वी की जलवायु का सबसे व्यापक वैज्ञानिक मूल्यांकन होता है। आईपीसीसी ने अब तक छः आकलन रिपोर्ट जारी की है। प्रथम रिपोर्ट वर्ष 1990 में जारी की थी। पाँचवीं आकलन रिपोर्ट वर्ष 2014 में पेरिस में जलवायु परिवर्तन सम्मेलन के लिए जारी की थी।

जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र की अन्तर सरकारी समिति की छठी आकलन रिपोर्ट

"जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र की अन्तर सरकारी समिति (आई.पी.सी.सी.) द्वारा 6 अगस्त, 2021 को सम्पन्न कार्यकारी समूह के 14वें सत्र तथा आईपीसीसी के 54वें सत्र में 195 देशों और वैज्ञानिकों के समन्वय से छठी आकलन रिपोर्ट- 'क्लाइमेन्ट चेंज 2021: दी फिजीकल साइंस बेसिस' को अनुमोदन प्रदान किया गया। एआर 6 में यह स्वीकार किया गया है कि ऐतिहासिक समेकित उत्सर्जन ही जलवायु संकट का स्रोत है, जिसका सामना सारे विश्व को करना है।"[8] आईपीसीसी की छठी आकलन रिपोर्ट के आठ मुख्य निष्कर्ष निम्नानुसार है—

(i) जलवायु परिवर्तन हो रहा है। यह मानवीय गतिविधियों की लापरवाही का परिणाम है और मानव एवं प्राकृतिक प्रणालियों के लिए खतरा है। वैश्विक जीवाश्म ईंधन की खपत पिछले पचास वर्षों में दोगुनी से अधिक हो गयी है। वर्ष 1971 में दुनिया में लगभग 4 अरब मीट्रिक टन तेल की खपत हुई थी। 2018 में यह खपत 8 बिलियन मीट्रिक टन हो गई। वर्ष 2015 से वनों की कटाई की दर भी बढ़ रही है। हर वर्ष अनुमानित 10 मिलियन हैक्टेयर वनों की सफाया हो रहा है।

(ii) वैश्विक तापमान बढ़ रहा है, ग्लेशियर पिघल रहे हैं और समुद्रों का जल स्तर बढ़ रहा है। पूर्व औद्योगिक युग के पश्चात् से वैश्विक तापमान में 0.08C से अधिक की वृद्धि हुई है एवं आगे आने वाले दशकों में तापमान के और अधिक बढ़ने की संभावना है। 1850-1900 से 2010-2019 तक कुल मानव जनित वैश्विक सतह तापमान वृद्धि की संभावित सीमा 0.08 सें. से 13 सें. है, जिसका सर्वोत्तम अनुमान 1.07 सें. है। इक्कीसवीं सदी के अन्त तक समुद्रों का स्तर लगभग 0.7 मीटर तक बढ़ जायेगा। ग्लेशियरों के लुप्त होने की दर 1990 के दशक से 57 प्रतिशत बढ़ गई है और ऐसा अनुमान है कि 2100 तक पृथ्वी के दो तिहाई ग्लेशियर लुप्त हो जायेंगे।

(iii) जैव विविधता लुप्त हो रही है, महासागरों का अम्लीकरण तीव्र हो रहा हैं एवं पानी दुर्लभ होता जा रहा है।

(iv) बाढ़, लू, सूखा एवं उष्णकटिबंधीय चक्रवातों की आवृत्ति तथा तीव्रता बढ़ रही है। जलवायु परिवर्तन पर किए गए अध्ययन बता रहे हैं कि ग्लोबल वार्मिंग ने हॉर्न ऑफ अफ्रीका में सूखे एवं उत्तरी गोलार्द्ध में रिकार्ड तोड़ गर्मी की संभावना को 100 गुना तक बढ़ा दिया है। वर्ष 2050 तक दुनिया की दो तिहाई आबादी सूखे से प्रभावित हो सकती है। विश्व की आबादी का आधा हिस्सा वर्ष भर में कम से कम एक महीने के लिए पानी की कमी से जूझ रहा है।

(v) जलवायु परिवर्तन मौजूदा वैश्विक असमानताओं को और अधिक गहरा कर रहा है, क्योंकि विकासशील देश एवं कमजोर समुदाय जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से असंगत रूप से प्रभावित हो रहे हैं। उदाहरण के लिए स्वास्थ्य सेवाओं, संसाधनों तथा पर्याप्त बुनियादी ढ़ाँचे तक पहुँच की कमी के कारण निर्धन लोगों की बाढ़ एवं सूखे जैसी चरम मौसम की घटनाओं से प्रभावित होने की संभावना अधिक होती है।

(vi) जलवायु परिवर्तन वैश्विक अर्थव्यवस्था को गंभीर हानि पहुँचा रहा है। बाढ़ एवं सूखे जैसी चरम मौसम की घटनाओं से अकल्पनीय आर्थिक हानि होती है।

(vii) मानवीय जीवनशैली एवं व्यवहार में बदलाव लाकर वर्ष 2030 तक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को आधा किया जा सकता है।

(viii) जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है।

जलवायु परिवर्तन से उपजे खतरों के समाधान में कॉप (सी.ओ.पी.) से अपेक्षाएँ

जलवायु में हो रहे वैश्विक परिवर्तनों ने मानव, जीव जन्तुओं तथा वनस्पतियों के समक्ष संकट उत्पन्न कर दिया है। औद्योगिक, कृषि एवं सेवा क्षेत्र का विकास जितनी तीव्र गति से हो रहा है, पृथ्वी का तापमान भी उतनी ही गति से बढ़ता जा रहा है। "वैश्विक स्तर पर जलवायु परिवर्तन पर चिन्ता पृथ्वी सम्मेलन (1992) में मुखर होकर सामने आई एवं उसी के निर्णयों को कार्यरूप देते हुए 21 मार्च, 1994 को जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यू.एन.एफ.सी.सी.) अस्तित्व में आया। संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्यों की सदस्यता वाले

इस निकाय की सम्पुष्टि 198 देशों द्वारा की जा चुकी है और इन्हें सामूहिक रूप से पार्टीज टु द कन्वेंशन कहा जाता है।"[9]

कॉन्फ्रेंस ऑफ पार्टीज (कॉप)

ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को स्थिर करने तथा पृथ्वी को जलवायु परिवर्तन के संभावित खतरों से बचाने के लिए कॉप के सदस्य राष्ट्रों का सम्मेलन 1995 से प्रतिवर्ष आयोजित होता आ रहा है। कॉप, संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन कन्वेंशन (यू.एन.एफ. सी.सी.सी.) का निर्णय लेने वाला सर्वोच्च निकाय है। कन्वेंशन के पक्षकार सभी राष्ट्रों को कॉप (सी.ओ.पी.) में प्रतिनिधित्व प्राप्त है, जहाँ वे कन्वेंशन के फैसलों के कार्यान्वयन और कॉप द्वारा अपनाए गए किसी भी अन्य कानूनी उपकरणों की समीक्षा करते हैं। अब तक कॉप के अट्ठाईस सम्मेलन आयोजित हो चुके हैं। महत्त्वपूर्ण कॉप सम्मेलन एवं उन सम्मेलनों में लिए गए निर्णयों का ब्यौरा निम्नानुसार है—

जलवायु परिवर्तन कन्वेंशन के पक्षकारों के प्रथम सम्मेलन का आयोजन 28 मार्च-7 अप्रैल, 1995 को बर्लिन (जर्मनी) में हुआ। इस सम्मेलन में कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन की मात्रा निर्धारित करने के लिए कोई सहमति नहीं बन पायी। जलवायु परिवर्तन के पक्षकारों का दूसरा सम्मेलन जुलाई, 1996 में जिनेवा (स्विट्जरलैण्ड) में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में भी कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन की मात्रा पर सहमति नहीं बन पायी।

"जलवायु परिवर्तन के पक्षकारों का तीसरा सम्मेलन जापान के क्योटो नगर में (1 से 10 दिसम्बर, 1997) सम्पन्न हुआ। काफी बहस के बाद अन्ततः विकसित राष्ट्रों द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन में वर्ष 1990 के स्तर से 5.2 प्रतिशत की कटौती करने पर सहमति हुई। इसे क्योटो समझौता के नाम से जाना जाता है। अब यह कानून बन गया है"[10], जो 16 फरवरी 2005 से लागू हुआ। क्योटो प्रोटोकाल कानूनी रूप से देशों (पार्टियों) को उत्सर्जन में गिरावट के लक्ष्यों को हासिल करने के लिए बाध्य करता है। प्रोटोकाल की पहली प्रतिबद्धता अवधि वर्ष 2008 से शुरू हुई और 2012 में समाप्त हुई। दूसरी प्रतिबद्धता अवधि 1 जनवरी 2013 को शुरू हुई और 2020 में समाप्त हुई।

25 अक्टूबर-5 नवम्बर, 1999 को बॉन (जर्मनी) में आयोजित पाँचवें जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन के पक्षकार क्योटो प्रोटोकाल की व्यापक अवधारणाओं को कार्यशील वास्तविकताओं में बदलने के अपने प्रयासों में तेजी लाने के लिए सहमत हुए। कॉप-6 का आयोजन 13 से 25 नवम्बर, 2000 को हेग में हुआ। इस सम्मेलन में अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय जलवायु परिवर्तन के हानिकारक प्रभावों को रोकने के लिए सहमत हुआ। कॉप-6 में सहमति के मुद्दे थे-कृषि क्षेत्रों में बदलाव, ध्रुवीय बर्फ का पिघलना और समुद्र का बढ़ता स्तर। छठवाँ जलवायु परिवर्तन सम्मेलन दो भागों में हुआ था और इसका दूसरा सत्र जुलाई, 2001 में बॉन (जर्मनी) में आयोजित हुआ था।

सातवीं क्लाइमेट चेंज कॉन्फ्रेंस मराकेश (मोरक्को) में 29 अक्टूबर से 9 नवम्बर, 2001 को सम्पन्न हुई। कॉप-8 का आयोजन अक्टूबर, 2002 में नई दिल्ली में हुआ। कॉप-9 इटली के मिलान शहर में दिसम्बर, 2003 में आयोजित हुआ। कॉप-10 का आयोजन 6-17 दिसम्बर, 2004 को ब्यूनस आयर्स (अर्जेंटीना) में सम्पन्न हुआ।

पृथ्वी के बढ़ते तापमान को कम करने के लिए यूएन जलवायु समझौता सम्मेलन (सी.ओ.पी.-11) कनाडा के मांट्रियल शहर में 28 नवम्बर-9 दिसम्बर, 2005 को आयोजित हुआ। "इस सम्मेलन में ग्रीनहाउस गैसों के सन्दर्भ में क्योटो सन्धि के निर्धारित लक्ष्यों पर औपचारिक सहमति जताई गई। यह सम्मेलन जलवायु परिवर्तन पर यू.एन. फ्रेमवर्क कन्वेंशन (यू.एन.एफ. सी.सी.सी.) के दलों की बैठक (सी.ओ.पी.) का 11वाँ वार्षिक सत्र (सी.ओ.पी.-11) था, साथ ही वर्ष 1997 के क्योटो प्रोटोकॉल के लिए दलों की बैठक का (सी.एम.पी.-1) पहला सत्र था।"[11]

इसी प्रकार ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती के लिए विश्व-व्यापी सहमति कायम करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में वैश्विक सम्मेलन बाली द्वीप (इण्डोनेशिया) में 3-14 दिसम्बर, 2007 को सम्पन्न हुआ। यह सम्मेलन यू.एन. फ्रेमवर्क कन्वेंशन के दलों की बैठक (सी.ओ.पी.) का 13वाँ वार्षिक सत्र (सी.ओ.पी.-13) था, साथ ही क्योटो प्रोटोकॉल के लिए दलों की बैठक का (मीटिंग ऑफ दि पार्टीज-3) तीसरा सत्र था। इस सम्मेलन का आयोजन संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 1997 में बनी 'क्योटो संधि' से आगे की रणनीति बनाने हेतु किया गया था।

1-12 दिसम्बर, 2008 को पौलेण्ड के पोजनन शहर में कॉप-14 का आयोजन हुआ। इस सम्मेलन का प्राथमिक फोकस क्योटो प्रोटोकॉल के उत्तराधिकारी पर बातचीत का रहा। कॉप-15 का आयोजन 7-18 दिसम्बर, 2009 को डेनमार्क के कोपेनहेगन शहर में हुआ था।

कॉप-16, जिसका आयोजन मैक्सिको के कानकुन में 28 नवम्बर से 10 दिसम्बर, 2010 के दौरान हुआ था, में ग्रीन क्लाइमेट फंड की फंडिंग पर सहमति नहीं बन पायी एवं न ही क्योटो प्रोटोकॉल की दूसरी अवधि के लिए प्रतिबद्धता पर सहमति बनी।

संयुक्त राष्ट्र के तत्वाधान में जलवायु परिवर्तन पर 17वाँ कॉप सम्मेलन 28 नवम्बर-9 दिसम्बर, 2011 को डरबन (दक्षिण अफ्रीका) में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन की मुख्य-मुख्य उपलब्धियाँ निम्न थी—

(i) विकासशील देशों को 100 बिलियन डॉलर उपलब्ध करवाने हेतु ग्रीन क्लाइमेट फंड की स्थापना पर सहमति बनी।

(ii) विकसित राष्ट्रों द्वारा कृषि को भी जलवायु परिवर्तन के अन्तर्गत लाया जाना स्वीकार किया गया।

(iii) 1 जनवरी, 2013 से 31 दिसम्बर, 2020 तक द्वितीय क्योटो प्रोटोकॉल की प्रतिबद्धता अवधि पर सहमति बनी, जो इस सम्मेलन की बड़ी उपलब्धि रही।

ग्लोबल वार्मिंग पर नियन्त्रण हेतु यू.एन. जलवायु परिवर्तन सम्मेलन पेरिस (फ्रांस) में 30 नवम्बर से 12 दिसम्बर, 2015 को सम्पन्न हुआ। यह यू.एन. फ्रेमवर्क कन्वेंशन के दलों की बैठक का 21वाँ वार्षिक सम्मेलन था। कॉप-21 की बैठक में कॉर्बन उत्सर्जन में कटौती के जरिए वैश्विक तापमान में वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखने हेतु एक व्यापक सहमति बनी। इस सम्मेलन की बड़ी उपलब्धि ऐतिहासिक 'पेरिस समझौता' था। पेरिस समझौते के मुख्य बिन्दु निम्नानुसार है—

(i) पेरिस समझौते का मुख्य उद्देश्य ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर अंकुश लगाकर ग्लोबल वार्मिंग को औद्योगिक क्रान्ति से पूर्व के स्तर से अधिकतम 2 डिग्री सेल्सियस नीचे रखना है।

(ii) पेरिस समझौते के तहत विकसित राष्ट्रों से 100 अरब डॉलर की (जलवायु निधि) वित्तीय सहायता के लक्ष्य को वर्ष 2020 तक प्राप्त करना है।

(iii) पेरिस समझौता वर्ष 2020 के पश्चात् क्योटो प्रोटोकॉल का स्थान ग्रहण करेगा।

6 से 17 नवम्बर, 2017 के मध्य बॉन (जर्मनी) में जलवायु परिवर्तन पर यू.एन. फ्रेमवर्क कन्वेंशन के दलों का 23वाँ सम्मेलन आयोजित हुआ। "इस सम्मेलन में पेरिस समझौते के कार्यक्रम को पूरा करने के लिए दिशा-निर्देश प्रदान किए गए।" सम्मेलन के अन्त में तालानोआ संवाद के लिए एक कार्य योजना प्रस्तुत की गयी, जिसमें जलवायु से सम्बन्धित विभिन्न देशों के द्वारा उठाए गए कदमों का मूल्यांकन किया जायेगा।"[12] सम्मेलन में 2015 में जलवायु परिवर्तन पर हुए पेरिस समझौते के कार्यान्वयन के लिए नियम बनाने की दिशा में भी प्रगति हुई।

स्कॉटलैण्ड (ब्रिटेन) के ग्लासगो शहर में 31 अक्टूबर से 12 नवम्बर, 2021 तक संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन (सी.ओ.पी.-26) का आयोजन हुआ। यह सम्मेलन पृथ्वी के तापमान को 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित रखने एवं दुनिया को जलवायु परिवर्तन के विनाशकारी प्रभाव से बचाने की वैश्विक सहमति के साथ सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में लगभग 140 देशों ने उनके उत्सर्जन को 'शुद्ध शून्य' तक लाने हेतु अपनी लक्षित तिथियों की घोषणा की। यह इस सम्मेलन की बड़ी उपलब्धि थी, क्योंकि पेरिस समझौते में विकासशील देश अपने उत्सर्जन को कम करने के लिए सहमत नहीं हुए थे, और उन्होंने केवल जीडीपी की 'उत्सर्जन-तीव्रता' को कम करने के प्रति सहमति जताई थी। सी.ओ.पी.-26 की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि ग्लासगो ब्रेकथ्रू एजेंडा है, जिसे 42 देशों द्वारा अनुमोदित किया गया है।

मिस्र के शर्म अल शेख में 6-18 नवम्बर, 2022 को सी.ओ.पी.-27 का आयोजन सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में सी.ओ.पी.-27 में भागीदार रहे विश्व के प्रमुख राष्ट्रों में निम्नलिखित कदम उठाने पर सहमति बनी—

(i) सम्मेलन में निर्धन देशों को लॉस एंड डैमेज के तहत वित्तपोषण प्रदान करने के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर हुए।

(ii) सी.ओ.पी.-27 में विकासशील देशों में जलवायु प्रौद्योगिकी समाधानों को बढ़ावा देने के लिए एक नया पंचवर्षीय कार्यक्रम शुरू किया गया।

(iii) जलवायु परिवर्तन, समस्या एवं संभावित समाधान, दोनों के रूप में जल के महत्त्व को प्रतिबिंबित करने हेतु जल अनुकूलन और लचीलापन पहल पर कार्यवाही कार्यक्रम शुरू किया गया।

(iv) व्यवसायों एवं संस्थाओं की जवाबदेही तय करने पर सहमति बनी।

संयुक्त अरब अमीरात के दुबई में 30 नवम्बर से 13 दिसम्बर, 2023 तक कॉप की 28वीं बैठक सम्पन्न हुई। कॉप-28 शिखर सम्मेलन के अंतिम सत्र में लगभग 200 देशों के बीच एक ऐतिहासिक जलवायु समझौते पर सहमति बनी, जिसमें जलवायु संकट के प्रमुख कारण जीवाश्म ईंधन (कोयला, तेल और गैस) का इस्तेमाल 'उचित और न्यायसंगत' तरीके से खत्म करने का आह्वान किया गया। वर्षों की कॉप बैठकों के पश्चात् दुनिया अन्ततः जलवायु परिवर्तन के इन कार्बन आधारित चालकों से खुद को दूर रखने के लिए प्रतिबद्ध हुई। दुबई के जलवायु सम्मेलन (सी.ओ.पी.-28) में हुए वाद-विवाद एवं परिचर्चाओं के पश्चात् निकले प्रमुख परिणाम निम्नानुसार है—

(i) द यूएई कंसेसस (दुबई जलवायु समझौते) के मसौदे में पेरिस समझौते के मद्देनजर तापमान में वृद्धि 1.5 डिग्री सेल्सियस तक सीमित रखने के उद्देश्य से ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में 'गहन, द्रुत और अनवरत' कटौती का आह्वान किया गया।

(ii) "इस समझौते में निर्धारित लक्ष्यों को हासिल करने के लिए 8 सूत्री योजना की भी पेशकश की गई, जिसमें 2050 तक नेट जीरो उत्सर्जन हासिल करने के लिए, इस दशक में कार्रवाई में तत्परता और तेजी लाते हुए, ऊर्जा प्रणालियों में 'उचित, व्यवस्थित और न्यायसंगत तरीके से जीवाश्म ईंधन के इस्तेमाल में कमी' लाना शामिल है।"[13]

(iii) सी.ओ.पी.-28 की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि हानि और क्षति पर हुआ अभूतपूर्व समझौता है।

(iv) सी.ओ.पी.-28 में जलवायु परिवर्तन के प्रभावों के अनुकूल रणनीतियों का समर्थन करने पर बल दिया। पार्टियाँ अनुकूलन पर वैश्विक लक्ष्य और उसके ढाँचे के लक्ष्यों पर सहमत हुई।

(v) ग्लोबल कूलिंग संकल्प पर 60 से अधिक देशों ने हस्ताक्षर किए। ग्लोबल कूलिंग संकल्प का लक्ष्य 2050 तक शीतलन उपकरणों से उत्सर्जन को 68 प्रतिशत तक कम करना है और साथ ही 2030 तक स्थायी शीतलन तक पहुँच बढ़ाना है।

(vi) हरित जलवायु कोष के संसाधनों को दोबारा भरने के लिए 3.5 अरब डॉलर की प्रतिबद्धता पर सहमति हुई।

(vii) मानव स्वास्थ्य को जलवायु के प्रभावों से बचाने के कार्यों में तेजी लाने के लिए लगभग 120 देशों ने कॉप यूएई जलवायु और स्वास्थ्य घोषणा का समर्थन किया।

निष्कर्ष

पृथ्वी के औसत तापमान में हो रही वृद्धि के कारणों की खोज के लिए किसी वैज्ञानिक शोध की आवश्यकता नहीं है। ये कारण तो हम सबके इर्द-गिर्द मौजूद है। ग्लोबल वार्मिंग की रोकथाम के लिए मानव संतति को अब ऐसी वैश्विक अर्थव्यवस्था अपनानी पड़ेगी, जिसमें पर्यावरणीय कारकों— जल, वायु, मृदा, वनस्पतियों, जलचरों, नभचरों, थलचरों को क्षति पहुँचाए बिना आर्थिक विकास को गति प्रदान की जा सके। आर्थिक विकास की प्रक्रिया में जिन पर्यावरणीय कारकों का दोहन किया जाए, उनकी पूर्ति की यथोचित व्यवस्था की जाए, ताकि वे भावी पीढ़ी के लिए भी उपलब्ध हो। हरित अर्थव्यवस्था इसका सबसे बेहतर विकल्प है।

संदर्भ सूची

1. लाल, डी.एस., जलवायु विज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2008, पृ.सं. 373
2. प्रतियोगिता दर्पण, दिसम्बर, 2021, पृ.सं. 86
3. फड़िया, बी.एल. एवं फड़िया, कुलदीप, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा, 2020, पृ.सं. 631
4. जोशी, रतन, जैव भूगोल एवं जैव विविधता, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2007, पृ.सं. 175
5. सिंह, सविन्द्र, आपदा प्रबन्धन, प्रवालिका पब्लिकेशन्स, प्रयागराज, 2022 पृ.सं. 326
6. पुरोहित, ममता, श्रीवास्तव, पूर्णिमा एवं मिश्रा, राजेश कुमार, ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभाव, वन संज्ञान, वोल्यूम.5, नं. 9, सितम्बर, 2018
7. भाटिया एवं कोली, पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण जैविकी, रमेश बुक डिपो, जयपुर, 2006-07, पृ.सं. 513
8. प्रतियोगिता दर्पण, अक्टूबर, 2021, पृ.सं. 44
9. प्रतियोगिता दर्पण, जनवरी, 2024, पृ.सं. 71
10. सिंह, सविन्द्र, पर्यावरण भूगोल, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 2010, पृ.सं. 264
11. प्रतियोगिता दर्पण, फरवरी, 2020, पृ.सं. 116
12. प्रतियोगिता दर्पण, अगस्त, 2019, पृ.सं. 105
13. प्रतियोगिता दर्पण, फरवरी, 2024, पृ.सं. 70